TEXT PROBLEM WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_182961
UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—23—4-4-69—5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81 C55R Accession No. P. G. H3080

Author चौहान, देवीसिंह

Title खत का प्रमाण दो · 1963 ·

This book should be returned on or before the date last marked below.

रक्त का प्रमाण दो

देवी सिंह चौहान एम. ए. बी. टी.

अध्यक्ष

हिन्दी विभाग

राजकुमार कालेज रायपुर (म. प्र.)

भूमिका

डाक्टर पद्मलाल पन्नालाल बख्शी

भूतपूर्व संपादक "सरस्वती"

उदय प्रकाशन

वाराणसी

प्रकाशक
अन्यतम प्रकाशन
दिल्ली, रायपुर, वाराणसी

वितरक
उदय प्रकाशन
वाराणसी

मंजुल साहित्य सदन
राजकुमार कालेज, रायपुर

प्रथम संस्करण
नवम्बर १९६३

मूल्य ३.००

RAKTAKA PRAMANDO, Poetry
By DEVI SINGH CHAWHAN **Price Rs. 3-00**
Stockist—UDAY PRAKASHAN
VARANASI

सर्वाधिकार लेखक के अधीन

मुद्रक
विश्वनाथ भार्गव
मनोहर प्रेस
वाराणसी

रक्त का प्रमाण दो

हँस-हँसकर जो प्राण दे रहे
मातृभूमि के रक्षण में,
और जूझने को तत्पर हैं,
इसी हेतु समराङ्गण में,
उनके चरणों में अर्पित हैं
भावों की अस्फुट कलियाँ,
सौरभ से भर दें जो खिलकर
मानव-जीवन की गलियाँ ॥

भूमिका

ठाकुर देवीसिंह जी चौहान हिन्दी-साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् हैं। वे अध्यापक हैं, अतएव कवित्व-कला के वे स्वयम् परीक्षक हैं। कवित्व-कला के लिए जो गुण आवश्यक होते हैं उनकी विवेचना अध्यापकों को स्वयम् करनी पड़ती है। उनमें ज्ञान का गौरव रहता है, उनमें सत् और असत् का निर्णय करने के लिए जो सूक्ष्म-दर्शिता चाहिए वह भी विद्यमान रहती है, परन्तु जो कवि होता है उसमें हम ज्ञान का गौरव नहीं देखते, उसमें हम एक विशेष भाव-सौन्दर्य ही देखना चाहते हैं। यही कारण है कि अधिकांश कवियों के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि उनमें ज्ञान का गौरव न रहने पर भी रचना-शक्ति की वह असाधारणता रहती है जिसके कारण वे साहित्य-जगत् में अक्षय स्थान प्राप्त कर लेते हैं। कवियों के लिए कर्म-जगत् नहीं, भाव-जगत् ही स्पृहणीय होता है। कर्म-जगत् में चाहे उनकी जैसी स्थिति हो, पर भाव-जगत् में वे एक अपूर्व सौन्दर्य और आनन्द के वातावरण में ही निवास करते हैं। यह देखा गया है कि कितने ही कवि कर्म-जगत् में यथेष्ट कष्ट और दुःख को सहन करते रहे हैं, परन्तु संसार को उन्होंने चिरन्तन आनन्द देकर श्रोत के रूप में अपनी रचनाएँ दीं। इसमें सन्देह नहीं कि विज्ञों का पांडित्य कवियों की सहृदयता से पृथक् होता है। कवि सचमुच कल्पना के उस माया-लोक में रहता है जहाँ चिरन्तन सौन्दर्य और आनन्द के भाव रहते हैं। उस लोक में कर्म-जगत् की कटुता नहीं रहती, यथार्थ जगत् की विषमता नहीं रहती। इस बात को लेकर जगदीशचन्द्र माथुर जी ने 'भोर का तारा' नामक एक एकांकी नाटक लिखा। उसमें कवि के उन दो रूपों का वर्णन हुआ है जिनमें एक का सम्बन्ध भाव-जगत् से

है और दूसरे का सम्बन्ध कर्म-जगत् से। जब तक कवि अपने भाव-जगत् में लीन रहता है तब तक वह कर्म-जगत् की उपेक्षा ही करता है, परन्तु ज्यों ही कर्म-जगत् से एक आह्वान आता है तब वह अपने भाव-जगत् को छोड़कर कर्म-जगत् में आ जाता है और अपनी कवित्व-शक्ति के द्वारा वह लोगों में सच्ची कर्म-शक्ति की प्रेरणा भर देता है।

आज भारतवर्ष एक विशेष स्थिति में पड़ा हुआ है, पराधीनता के पाश से मुक्त होते ही वह नव-निर्माण में व्यस्त हो गया। उसके लिए दरिद्रता के साथ-साथ अज्ञान को दूर करने का सबसे बड़ा प्रश्न था, उसे कल्पना के भाव-जगत् से अनुराग नहीं था, वह जीवन की यथार्थता से परिचित होकर कर्म-शक्ति प्राप्त करना चाहता था जिससे निर्माण के लिए नई चेतना और नई शक्ति जागृत हो। हिन्दी-साहित्य में ब्रजभाषा के रसोन्माद के बाद आधुनिक साहित्य में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ। नवयुग के साथ साहित्य में नव आदर्श की प्रतिष्ठा हुई। उसमें लोक-शिक्षा की ओर सभी तरुण कवि प्रवृत्त हुए। इसके बाद जो छायावाद का युग आया उसने तरुण कवियों को एक रहस्यमय भाव-जगत् की ओर प्रेरित किया। तभी भारत में स्वाधीनता के लिए जो एक अदम्य लालसा लोगों में उत्पन्न हो गई; उसके कारण वे उन्नति के पथ पर अग्रसर होने के लिए साहित्य में प्रगतिवाद की ओर प्रवृत्त हो गए। साहित्य में सदैव तारुण्य की ही दीप्ति रहती है चाहे लोक-शिक्षा काल हो या छायावाद का युग हो या प्रगतिवाद का युग हो। उसके प्रवर्त्तक तरुण कवि ही होते हैं। तारुण्य काल में विश्वास की जो एक दृढ़ता रहती है उसके कारण रचना-शक्ति में एक विशेषता आ जाती है। कुछ समय से कितने ही लोग यह अनुभव करने लगे थे कि हिन्दी-साहित्य में कवित्व-कला अपने गौरव से कुछ च्युत-सी होती जा रही है। उसी समय चीन के आक्रमण के साथ समस्त देश में एक ऐसी लहर-सी आ गई जिसने

तरुणों के हृदय में एक नई उमङ्ग पैदा कर दी। युद्ध का काल विध्वंसक अवश्य होता है पर उसी में पौरुष की सच्ची परीक्षा होती है। मृत्यु को सानन्द स्वीकार कर लोग मृत्युंजय हो जाते हैं। गौरव का जो पथ होता है वह उन्हें विलास की ओर नहीं, मृत्यु की ओर ले जाता है। त्याग के द्वारा लोगों के देश-प्रेम का गौरव प्रगट होता है। ऐसी स्थिति में तरुण कवियों के हृदय में रुद्र के भैरवनाद के साथ त्याग और देश-भक्ति का विजय-घोष परिस्फुट होता है। आज जितने कवि हैं, सभी के स्वर में वही विजय-घोष है।

ठाकुर देवीसिंह चौहान ने कवि का हृदय पाया है। इसीलिये यह संभव नहीं कि उनके हृदय में कर्म-जगत् का यह आह्वान उद्वेलित न हो। उनकी सभी रचनाओं में तारुण्य का विश्वास, तारुण्य का उल्लास, तारुण्य की निर्भीकता तथा तारुण्य की स्फूर्ति बहुत ही सफलतापूर्वक व्यक्त हुई है। 'भोर का तारा' के कवि की तरह वे कल्पना-जगत् को छोड़कर यथार्थ जगत् में लोगों को अपने गानों के द्वारा सच्ची प्रेरणा और शक्ति दे रहे हैं। यद्यपि प्रस्तुत पुस्तक में उनके कवि-व्यक्तित्व का केवल राष्ट्रवादी रूप ही सहज प्रस्फुटित होता दृष्टिगोचर होता है, किन्तु उनकी अन्य रचनाओं में राष्ट्रीयता के स्वर के साथ-साथ जो अन्य स्वर गुंजित हुए हैं, उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। उन स्वरों में प्रेमानुभूति की मार्मिक अभिव्यंजना, प्राकृतिक सौन्दर्य की छटा, दैन्य का रुदन तथा हास्य की झलक भारती का शृङ्गार करती दीख पड़ती है। उक्तियों की रम्यता, नवीनतम उद्भावनाओं की सुन्दर योजना, कल्पना की हरियाली, भावों की गहराई आदि देदीप्यमान गुण उनकी काव्य-प्रतिभा के परिचायक हैं। चौहान जी की राष्ट्रीय भावना में भारत के अतीत गौरव और स्वदेश-प्रेम के साथ-साथ आक्रामक के प्रति विद्रोह का जो प्रखर स्वर सुन पड़ता है उससे सर्व साधारण को नवीन मानसिक शक्ति,

अदम्य साहस तथा वीरोचित उत्साह की एक ऐसी नूतन उमङ्ग मिलेगी जो राष्ट्रोत्थान के मार्ग में आनेवाली सामाजिक वैषम्य की दीवारों को ढहा देगी और शत्रुओं को देश की सीमा से विताड़ित करने में सक्षम सिद्ध होगी। इसमें संदेह नहीं कि ऐसी रचनाओं के द्वारा लोगों में देश-भक्ति के साथ-साथ सच्ची कर्म-शक्ति का भी विकास होगा। ऐसी रचनाओं का स्वागत सभी लोग करेंगे। मुझे पूर्ण विश्वास है कि जनता में चौहान जी की इस **'रक्त का प्रमाण दो'** नामक रचना का यथेष्ट प्रचार होगा।

१४-४-६३
राजनाँदगाँव
(मध्यप्रदेश)

आ मु ख

चीनी आक्रमण के कारण आज हमारे सामने एक ऐसी विकट समस्या उपस्थित होगई है जिसने न केवल भारत के जन-जीवन में उथल-पुथल मचा दी है, वरन् जिससे विश्व-भर में एक अजीब बेचैनी का वातावरण छा गया है। सर्वाधिक चिन्ताजनक बात तो यह है कि जो भारत विश्व के अन्य देशों को समराग्नि में कूदने से रोकता रहा, जो समस्त झगड़ों को शान्ति-वार्त्ता के माध्यम से सुलझाने की प्रेरणा देता रहा, जो अनवरत बुद्ध और बापू के शान्ति-संदेश के प्रसारण का अग्रदूत बना रहा, उसी को परिस्थितियों ने चीन के विरुद्ध अस्त्र-शस्त्र उठाने को बाध्य कर दिया—आक्रामक से आत्म-सुरक्षा के लिए, देश की अखंडता के लिए तथा महान् त्यागों और बलिदानों के बल पर अर्जित स्वतंत्रता की रक्षा के लिए शान्ति-प्रिय भारतवासियों को हथियार उठाना अत्यावश्यक हो गया। संसार-भर में यह खबर ग्रीष्मकालीन वन-वह्नि की भाँति फैल गई। कोने-कोने से चीन की आक्रामक नीति की निन्दा होने लगी, यहाँ तक कि साम्यवादी देशों में से भी कइयों ने इस गर्हित विस्तारवादी नीति का ज़ोरदार खंडन किया और भारत की सहिष्णुता तथा ईमानदारी की भूरि-भूरि प्रशंसा की। आज हमें संसार की सद्भावनायें प्राप्त हैं किन्तु इसका यह आशय नहीं कि हमें अपनी सामरिक तैयारी बन्द कर देनी चाहिए या परमुखापेक्षी बनकर हाथ पर हाथ रखे बैठे रहना चाहिए। अब समय आ गया है जब हम सब को मिलकर राष्ट्र को सुदृढ़ और शक्तिशाली बनाना है ताकि भविष्य में कोई भी शत्रु हमारी ओर कुदृष्टि से न देख सके।

देश की सुरक्षा का दायित्व केवल सैनिकों पर ही नहीं है। वे तो त्याग कर ही रहे हैं—अपने अमूल्य प्राणों को हँसते-हँसते युद्ध के

महायज्ञ में नैवेद्य-स्वरूप चढ़ा ही रहे हैं। किन्तु आवश्यकता इस बात की है कि देश के सभी नागरिक इस समस्या के ऊपर गम्भीरता से विचार करें और देश की इस संकटकालीन परिस्थिति में अपनी देश-भक्ति और कर्त्तव्यपरायणता का परिचय दें। आज जहाँ कृषकों को अधिक अन्न-उत्पादन की ओर ध्यान देना है, व्यापारी-वर्ग को व्यावसायिक उन्नति के द्वारा देश को समृद्धिशाली बनाना है, वहाँ देश के अन्यान्य वर्गों को यथा-शक्ति कार्य-रत रहकर विभिन्न क्षेत्रों में समुचित विकास करना है। प्रसन्नता की बात यह है कि भारत भूमि हमेशा ही त्याग के लिए उर्वरा रही है। आज देश के कोने-कोने से जो धन, स्वर्ण, रक्त-दान आदि की घोषणायें की जा रही हैं वे देश-व्यापी संगठन और एकात्मता की परिचायक हैं। इस क्षेत्र में महिलाओं का योगदान भी कम नहीं है। उन्होंने हज़ारों की संख्या में गर्म स्वेटर, मफ़लर तथा मोजे बुनकर हिमानी घाटियों में जूझने वाले जवानों के लिए भेजे हैं तथा घायल सैनिकों की सेवा-सुश्रूषा की है। इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्तमान परिस्थितियों के प्रति आज सारा देश जागरूक है और शत्रुओं को देश की सीमा से बाहर खदेड़ने का दृढ़ संकल्प कर चुका है।

आज जबकि देश के सभी वर्ग छोटे-बड़े, धनी-निर्धन अपने-अपने त्याग का परिचय दे रहे हैं, स्थान-स्थान पर यही चर्चा हो रही है कि इस संकट में साहित्यकार का योगदान क्या है? यदि इस समस्या पर गम्भीरता से चिन्तन किया जाय तो यह स्पष्ट झलकता है कि इस देश-व्यापी जागरण के पीछे साहित्यकार की प्रेरणा-शक्ति निहित है। साहित्यकार ही तो जन-जन में राष्ट्रीय चेतना भरने वाला है। वही तो माँ की पुकार पर हर किशोर को अभिमन्यु, हर जवान को राणा प्रताप और धनी-मानी को भामाशाह बनाता है। चन्द बरदाई की कलम में जादू था, स्वर में ओज था, उसने पृथ्वीराज चौहान के शौर्य

में विलक्षण आभा उत्पन्न कर दी थी, भूषण की रचनायें सुनकर कौन वीर समरांगण में नहीं कूद पड़ेगा ? फ्रान्स में रूसो और वाल्टेयर ने क्रान्ति के बीज बोये तो इटली में मेजिनी ने स्वतन्त्रता की ज्योति जगाई। इतिहास इस बात का साक्षी है कि सभी देशों में, सभी कालों में साहित्यकारों ने ही प्राण-शक्ति फूँक कर जन-जागरण किया है। साहित्यकार में अपेक्षाकृत प्रेरणाशक्ति अधिक होती है, उसमें बाह्य तथा आन्तरिक प्रभाव उत्पन्न करने की अपूर्व क्षमता निहित है। जिस दक्षता तथा नाटकीय ढङ्ग से साहित्यकार कविता, कहानी, नाटकादि का सृजन कर भावों का उद्‌बोधन कर जन-सामान्य को प्रभावित कर सकता है, अन्य कोई नहीं। जब कोई राजनीतिज्ञ अपने भाषण में श्रोताओं को बहा ले जाता है तो वहाँ साहित्य ही अपना पार्ट अदा करता दृष्टिगोचर होता है।

इस संकटकालीन परिस्थिति में विभिन्न देशी भाषाओं के कवियों और नाटककारों को चाहिये कि वे देश के कोने-कोने में अपनी वीरोचित रचनाओं का आकाशवाणी केन्द्रों तथा मंचों के द्वारा सम्यक प्रचार करें। इसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि भाषा सरल तथा ओजपूर्ण हो जो जन-साधारण तक पहुँच कर अपना प्रभाव दिखा सके। यह पांडित्य-प्रदर्शन का समय नहीं है, येन-केन-प्रकारेण जनता को देश की सुरक्षा के लिए तैयार करना है। आज की सामरिक समस्या उतनी सरल नहीं है, जितनी पहले हुआ करती थी। पहले धर्म-युद्ध होता था जब रणक्षेत्र में शत्रु को ललकार कर दो-दो हाथ हो जाते थे और जो युद्ध में जीत गया सो जीत गया। आज का शत्रु 'भाई-भाई' का नारा लगाकर पहले धोखे में डाल देता है, फिर एकबारगी ऐसे समय में आक्रमण करता है जब सम्हलना एक दुष्कर कार्य हो जाता है। आज का शत्रु आस्तीन का साँप बन कर डसने की कोशिश करता है, वह अपने आक्रमण से अपना प्रभुत्व इसलिए भी जमाना चाहता है कि

उसके सिद्धान्तों और मतों का प्रचार हो सके, उसको अपने माल की खपत के लिए नया क्षेत्र मिल सके, इने-गिने नेताओं की लीडरी बनी रहे तथा शोषण के लिए व्यापक क्षेत्र उपलब्ध हो सके।

अतएव साहित्यकार को यह बताना होगा कि आज के युद्ध का अभिप्राय क्या है, आज का शत्रु उत्पादन-केन्द्रों, बड़े-बड़े कारखानों तथा फैक्टरियों पर अपनी नज़र क्यों रखता है, सामरिक तैयारी के साथ-साथ विकास-योजनाओं को चलाते रखना तथा उत्पादन-वृद्धि क्यों आवश्यक है? ऐसे उपादेय साहित्य के सृजन की आवश्यकता है जो विभिन्न वर्गों के मनुष्यों की कर्त्तव्य-बुद्धि को जागृत करे, क्योंकि प्रजातांत्रिक शासन-प्रणाली तभी सफल हो पाती है जब सभी नागरिक अपने-अपने अधिकारों की रक्षा के लिए अपने कर्त्तव्य-पालन में जुटे रहें। पूँजीवाद के शोषण तथा साम्राज्यवाद के नृशंस अमानुषिक अत्याचारों से जन-सामान्य को सजग करने का दायित्व साहित्यकार पर जितना है, उतना किसी दूसरे पर नहीं। साहित्यकार अपनी सबल लेखनी के द्वारा जनता का मनोबल बढ़ा सकता है, वह राष्ट्रीय गीतों से त्याग और आत्मोत्सर्ग की भावना उत्पन्न कर सकता है, वह राष्ट्रीय चेतना जागृत कर समूचे राष्ट्र को एकता के सूत्र में बाँध सकता है और धर्म-बुद्धि तथा सहकारिता का भाव उसमें उद्वेलित कर राष्ट्र को उन्नति के चरम शिखर पर पहुँचा सकता है। वह क्या नहीं कर सकता? वह राष्ट्र-निर्माता है, जनता की बुद्धि की नकेल उसके हाथ में है, वह जटिल से जटिल परिस्थिति में भी जनता में ऐसा आत्म-विश्वास कायम कर सकता है, आशा का ऐसा दीपक जला सकता है जिसे साम्यवाद या साम्राज्यवाद की प्रबल आँधी कभी नहीं बुझा सकती। जब तक साहित्यकार की लेखनी में बल है, तब तक देश को बड़ी से बड़ी शक्ति भी पदाक्रांत नहीं कर सकती।

प्रस्तुत संग्रह के अस्तित्व का सर्वाधिक श्रेय मेरे आत्मीय ठाकुर गणेश सिंह, श्री विश्वम्भर नाथ शुक्ल, श्री राधिका नायक, श्री विमल पाठक, ठाकुर चन्द्रसेन सिंह, श्री बद्रीसिंह अधिकारी तथा श्री गिरिजा शंकर पांडेय और चिर जीवन-संगिनी उषा चौहान को है जिन्होंने मेरे काव्य-सृजन में शैथिल्य नहीं आने दिया। साथ ही मैं अपने उन अनेक प्रिय शिष्यों को जो मुझसे थोड़ी-सी साहित्यिक प्रेरणा लेकर भारती-मन्दिर के उपासक बनते जा रहे हैं कैसे विस्मृत कर सकता हूँ? पुस्तक के भूमिका लेखक साहित्य-मर्मज्ञ डा० पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का मैं विशेष रूप से अनुगृहीत हूँ जिनका आशीर्वाद मेरे साहित्यिक जीवन को निरन्तर नूतन भावों से अनुप्राणित करता रहेगा। जिन दिग्गज साहित्यकारों के सत्संग-मात्र ने समय-समय पर मुझे बौद्धिक चेतना देकर मेरे कवित्व को विकसित किया है उनमें डा० बलदेव प्रसाद मिश्र, डा० भवानी प्रसाद तिवारी, श्री अंचल, श्री नर्मदाप्रसाद खरे, श्री त्रिलोचन शास्त्री, श्री सुधाकर पाण्डेय, श्री दिनेश शर्मा, श्री हरीश डॉ० शम्भूनाथ सिंह, डॉ० नामवर सिंह, डॉ० राजबली पाण्डेय, डॉ० भगवत शरण उपाध्याय, डॉ० अवधविहारी लाल अग्निहोत्री, श्री ठाकुर प्रसाद सिंह, डॉ० प्यारेलाल रावत, डॉ० नरेन्द्रदेव सिंह, डॉ० टीकम सिंह तोमर आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन सबका मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ।

देवीसिंह चौहान

अनुक्रमणिका

उद्‌बोधन	...	...	...	१९
नेहरू ने बिगुल बजाया है		...	...	२५
अग्नि - परीक्षा	...	...	...	२८
विश्व - शान्ति को चुनौती		...	...	३२
दानवीर कौन हैं ?	...	...	...	३५
मानी माओ	...	...	...	३८
रक्त का प्रमाण दो	...	...	...	४१
नेफ़ा - युद्ध	...	...	...	४४
तू पत्थर हनता जाता है	...	...	...	४९
रण में मरना ही जीवन है		...	...	५१
माँग रहा सिन्दूर माँग का		...	...	५३
जननी का कर्ज़	...	...	...	५६
घर की फूट	...	...	...	६०
धड़ से शीश उतार दो	...	...	...	६२
जीना है तो बलवान बनो		...	...	६५
स्वतन्त्रता-संग्राम	...	...	...	६७
चाऊ चच्चा ! यहु कहा कीन ?		...	...	७२
जय चंदन तै तुम बचे रहेउ		...	...	७४
चीनी कुण्डलियाँ	...	...	...	७६
अमर शहीद शैतान सिंह		...	...	८०

उद्बोधन

सहते - सहते अन्याय घोर
जब गोआ ने करवट बदली,
तो सलाज़ार बौखला उठा
पर युक्ति न उसकी एक चली ।।

यों सन् इकसठ के साथ - साथ
उसके शोषण का अन्त हुआ ।
सूने पतझड़ के बाद कहीं
गोआ में पुनः वसन्त हुआ ।।

इतना तो हुआ मगर अब भी
आजाद नहीं है काश्मीर ।
चीनी भी बढ़ते आते हैं
हिम की घाटी को चीर-चीर ।।

हम शान्ति - नीति अपनाये हैं,
वे समझ रहे बल - हीन हमें ।
हम तो सौजन्य निभाते हैं,
वे समझ रहे हैं दीन हमें ।।

पिस – पिस शोषण के कोल्हू में
जब बेबस जन - जन जागेंगे,
तो पिटे श्वान की तरह शत्रु
मैदान छोड़ कर भागेंगे ।।

टिक सके फिरंगी जब न यहाँ
जो दुनिया – भर में छाये थे,
टिक पाये जब न फ्रान्सीसी
जिनको हम शीश नवाये थे,

तो ये अशक्त जर्जरित शत्रु
फिर कौन खेत की मूली हैं ?
इनको चटकाना सीमा से
क्या बात ? बहुत मामूली है ।।

मुट्ठी – मुट्ठी – भर धूल कहीं
सब डालें तो दब जायें ये ।
पर ध्यान रहे दीमक बनकर
मानव की जड़ न हिलायें ये ।।

दुनिया वीरों से भरी किन्तु
है कौन तुम्हारी सानी का ?
तुमने ही तो पहचाना है
क्या मूल्य यहाँ कु़र्बानी का ?

क्या भूल गए ए नौजवान !
राणा की अमर कहानी को ?
वन - वन डोला भूखा – प्यासा,
उस स्वतंत्रता – अभिमानी को ?

तुमने प्रताप बन अकबर की
अगणित सेना को चीर - चीर
रक्षा की थी केशरिया की
जौहर - व्रत धर रणधीर वीर ।।

बन वीर शिवा तुमने दुनिया
को जीवन का मग दिखा दिया ।
अंगारों पर सुमनों के सम
हँस-हँस कर चलना सिखा दिया ।।

तुम - से ही बाल कृष्ण ने तो
गोबर्द्धन अँगुली पर धारा ।
उन व्यभिचारी शिशुपालों को,
अन्यायी कंसों को मारा ।।

तुम - से ही राम - लक्ष्मण ने
मारीच - ताड़िका को हन कर
परिपूर्ण यज्ञ करवाया था
वन में मुनि के रक्षक बनकर ।।

आज़ाद, भगतसिंह औ' गणेश
बन कर जो तुमने काम किया,
क्या दुनिया में तुलना कोई
जिस तरह कि तुमने नाम किया ?

समराङ्गण में बढ़ते जाओ
कर ध्यान धनञ्जय-सुत का ही ।
लोथों पर चढ़ता-बढ़ता जो
ले वेग प्रबल मारुत का ही ।।

तुम राय पिथौरा-से सपूत,
बन आजादी के अग्रदूत,
कर याद सुनहला सजग भूत,
बढ़ जाओ बनकर राजपूत ।।

बढ़ चलो कि बढ़ता देख तुम्हें
शोषक की छाती दहलाये ।
हलचल मच जाये दुनिया में,
इन्द्रासन थर-थर थर्राये ।।

उसका जीने में जीना क्या
जिसको जीने का होश नही ?
चाहे जो हो, वह वीर नही,
जिसके सीने में जोश नहीं ।।

तुम अचल हिमाचल के समान
डट सकते हो तूफ़ानों में ।
बढ़ सकते हो झंझा में भी,
है क्रान्ति भरी अरमानों में ।।

तुम नहीं किसी से भी कम हो,
यदि अपने बल को पहचानो ।
दुनिया से नाम गुलामी का
अब तुम्हीं मिटाने की ठानो ।।

नाम शोषकों का इस भू पर
नहीं शेष रहने पाये ।
साम्राज्यवाद का नभ-चुम्बी
उत्तुंग महल भी ढह जाये ।।

अब समय आ गया है वीरो !
तुम अपनी ताक़त अज़माओ।
जो रौंद रहे हरियाली को,
उन पर अंगारे बरसाओ ।।

जब तक हमलावर भारत की
सीमा से दूर नहीं हटते,
जब तक ये सिर पर लहराये
विपदा के मेघ नहीं फटते,

जब तक जुल्मों के पंजों से
आजाद न होगा काश्मीर,
जब तक उस स्वर्गिक घाटी में
स्वच्छन्द न बहता है समीर,

जब तक न हमारी धरती का
कण - कण गायेगा मुक्ति - गान,
असहाय त्रस्त अबलाओं को
जब तक न मिलेगा अभय दान,

जब तक न गगन के पंछी - से
स्वच्छन्द खेलते हैं बच्चे,
उन्मुक्त न जब तक जन-जन है
हम माँ के पूत नहीं सच्चे ।।

जब तक न प्राप्त कर लेंगे हम
फिर वही पुरातन आन - बान,
बलि - पथ पर बढ़ते जायेंगे
बरसाती नदिया के समान ।।

जो रक्त बहाया है अब तक
दारुण नृशंस बर्बरता ने,
भोगी जो दग्ध यातनायें
भोली - भाली मानवता ने,

उसके बदले में चाहें तो
मय - ब्याज बसूली कर सकते।
चाहें तो हम इन नीचाशय
दनुजों को सहज निगल सकते॥

कर सकते इनकी हस्ती का
विध्वंसन आनन-फ़ानन में।
कल नहीं, आज ही चाहें तो
गूँजे 'जय-जय' स्वर जन-जन में॥

हम हैं सशक्त, हमने अब तक
मर - मर कर जीना सीखा है।
बरछा-बरछी क्या? तोपों के
सम्मुख भी अड़ना सीखा है॥

हमने सीखा है बढ़ जाना,
हम पीठ दिखाना क्या जानें?
सीखा शिखरों पर चढ़ जाना,
हम डट कर हटना क्या जानें?

मानव के बन्धन खोल - खोल
हम सबको मुक्त करा देंगे।
वे फाड़ गुलामी के पन्ने
नूतन भूगोल बना देंगे॥

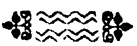

नेहरू ने बिगुल बजाया है

नेहरू ने बिगुल बजाया है।
पामर भारत की सीमा में दुस्साहस कर घुस आया है ।।

जिसकी शुचि रज में लोट - लोट
हम खेल - कूद कर बड़े हुए,
जिसकी ममता का अवलम्बन
पाकर ही हैं हम खड़े हुए,
जिसने हमको सुख देने में
अपने सुख का बलिदान किया,
हम लगे फूलने - फलने तो
उसको ही निज सुख मान लिया ।।
उस पर लहराये संकट के
बादल, न ताकते रहो खड़े।
यह काल जवानो ! पानी की
ताक़त अजमाने आया है ।।
नेहरू ने बिगुल बजाया है ।।

यह देव - भूमि, इसमें दैवी
वासन्ती फूल महकते हैं।
सारे धर्मों के विहग - वृन्द
स्वच्छन्द समोद चहकते हैं।।

हम भला चाहते दुनिया का,
अपनी तो ख़बर सभी लेते।
हम मलयानिल, कब थकते हैं
जग को सौरभ देते - देते ?

हमने जो प्यार उड़ेल दिया,
चीनी सत्ता को हुई कुढ़न।
पर ऐसे कुढ़ने वालो का
हमने ही किया सफाया है।।
नेहरू ने बिगुल बजाया है।।

समझा - समझा कर जग हारा,
पर चीन जमा है अपनी पर।
छिड़ गया तीसरा युद्ध कहीं,
श्मशान बनेगी अवनी - भर।।

उन्माद भरे 'हर - हर' बोलो,
जागो भारत की तरुणाई।
माँ का सिंदूर बचाना है,
तज दो अधरों की अरुणाई।।

छोड़ो मुरली की तान मधुर,
जागो, भैरव का शंख सुनो।
'इन्सान बनो, पशु को मारो'—
पुरखों ने यही सिखाया है।।
नेहरू ने बिगुल बजाया है।।

हम शीश झुकायेंगे न कभी,
चाहे जैसा हमलावर हो।
है धन्य वही जीवन जो माँ
के चरणों में न्योछावर हो।।

अवसर आने दो, हर जवान
शैतानसिंह बन जायेगा।
चौकी चुशूल - सा इंच - इंच —
रक्षण मे रण ठन जायेगा।।

हम नही मोम के बने हुए,
फ़ौलादी सारे अवयव हैं।
मृत्युञ्जय को क्या काल ? गरल
हमने सौ बार पचाया है।।
नेहरू ने बिगुल बजाया है।।

अग्नि-परीक्षा

स्वतंत्रता का मूल्य प्राण है, देखें कौन चुकाता है ?
देखें अग्नि-परीक्षा देने कौन सामने आता है ?

पहन शेर की खाल शृगालों
ने हमको ललकारा है।
भंग किया शङ्कर के तप को
सहसा आज दुबारा है॥
कहीं क्रोध में त्रिपुरारी ने
नेत्र तीसरा जो खोला,
चीन बनेगा नागासाकी,
बरसेगा पावक - गोला॥

अरे चीन ! मालूम नहीं क्या, भारत का बच्चा-बच्चा
माँ का रुदन देख प्रलयंकर शिवशंकर बन जाता है ?
स्वतंत्रता का मूल्य प्राण है, देखें कौन चुकाता है ?
देखें अग्नि-परीक्षा देने कौन सामने आता है ?

बुद्धदेव, बापू ने जीवन
की जो राह दिखाई थी,
जिस पर चलकर हमने खोई
आज़ादी फिर पाई थी।
उसी नीति को मान चीन ने
'पंचशील' को अपनाया।
'हिन्दी – चीनी भाई – भाई'
नारा रह – रह दुहराया।।

अच्छा हुआ कि धोखे से हम पर हमला कर बता दिया-
'चीनी भैया' नाता कितनी अच्छी तरह निभाता है ?
स्वतंत्रता का मूल्य प्राण है, देखें कौन चुकाता है ?
देखें अग्नि-परीक्षा देने कौन सामने आता है ?

हर मौसम के साथ – साथ
ज्यों गिरगिट रंग बदलता है,
लाल चीन का दृष्टि-कोण भी
वैसे ही छल - बल का है।
चाऊ – माऊ के चक्कर में
अब न भूल कर फंस जाना।
मधुर गरल से भरा हुआ है
इन लोगों का मुसकाना।।

इनका संधि-सुझाव शांति का नहीं, समर का न्योता है।
कौन लाल माई का देखें रण का बिगुल बजाता है ?
स्वतंत्रता का मूल्य प्राण है, देखें कौन चुकाता है ?
देखें अग्नि-परीक्षा देने कौन सामने आता है ?

ग़ैबी गोलों का गर्जन सुन
सीमा - प्रहरी जागा है।
तन - मन - धन जो नहीं दे सके
ऐसा कौन अभागा है ?
हर लड़का है गोरा - बादल,
हर लड़की लक्ष्मी बाई।
जन - जन भामाशाह बना है,
लहर एकता की आई ॥

भेद-भाव अब भूल बने सब हों ज्यों माँ-जाये भाई।
कु.र्बानी करने वाला ही तो इतिहास बनाता है ॥
स्वतंत्रता का मूल्य प्राण है, देखें कौन चुकाता है ?
देखें अग्नि-परीक्षा देने कौन सामने आता है ?

गाजर - मूली - सी हम उनकी
बोटी - बोटी काटेंगे।
उनके रुण्ड - मुण्ड से नेफ़ा
की हर घाटी पाटेंगे ॥
इन्च - इन्च लद्दाख - भूमि की
रम्य रक्त से सींचेंगे।
जीते जी दुश्मन के घट - घट
से प्राणों को खींचेंगे ॥

जब तक दम है युद्ध करेंगे, फिर क्यों विजय नहीं होगी ?
सर से कफ़न बाँध कर देखें कौन-कौन बढ़ जाता है ?
स्वतंत्रता का मूल्य प्राण है, देखें कौन चुकाता है ?
देखें अग्नि-परीक्षा देने कौन सामने आता है ?

यह हमला अभिशाप नही,
सच पूछो तो वरदान है।
आज हो रही शत्रु - मित्र की
क्या असली पहिचान है ?
गद्दारों के गरम लहू से
आगे बढ़ खेलो होली।
रंगे सियारों को पहचानो,
अब तक होली सो होली ।।

प्राण-प्रसून चढ़ा बलि-वेदी का सिंगार करने वाला
देव-तुल्य राणा प्रताप-सा घर-घर पूजा जाता है ।।
स्वतंत्रता का मूल्य प्राण है, देखें कौन चुकाता है ?
देखें अग्नि-परीक्षा देने कौन सामने आता है ?

विश्व-शान्ति को चुनौती

साम्यवाद से लोकतन्त्र का
आज ठना संघर्ष है।
कैसी विषम समस्याओं में
उलझा भारत वर्ष है?

क्यूबा, काँगो, काश्मीर में
भड़क रही है आग-सी।
सुन पड़ती बर्लिन - गाथा भी
एक बेसुरे राग – सी॥

इधर आज नगराज हिमालय
की बर्फ़ानी घाटी में
गरम लहू बहकर जम जाता
मिल जाता है माटी में॥

उसी खून को पी-पीकर तो
चीन हो गया लाल है।
रावण का अज्ञात रूप में
निकट आ गया काल है॥

ज्यों जंगल मे आग फैलती
और सिन्धु में ज्वार है,
वैसे ही तो साम्यवाद भी
चाह रहा विस्तार है॥

किन्तु आज उसके गुट-गुट में
दिखता है मत-भेद-सा।
बढ़ता जाता किसी डूबती
तरणी के जो छेद-सा॥

संधि, युद्ध, फिर संधि, मगर क्या?
उर में बैठा व्याल है।
कुटिल कंटकाकीर्ण हो रही
राजनीति की डाल है॥

नहीं भूख मिटती सत्ता की
फल, मेवे, अमरूद से।
नई फ़सल लहलहा रही है
तोपों की बारूद से॥

कहने को तो देश-देश में
जनता की सरकार है।
पर शासक ही फुलवारी का
लूट रहा शृङ्गार है।

और अभी पूँजीपतियों ने
नहीं उतारी केंचुली।
सेवा की शुचिता से उनकी
कलुषी काया कब धुली?

एक ओर मधुशालाओं में
प्याले ढाले जा रहे।
और दूसरी ओर भुखमरों
के पंजर बिलला रहे॥

कुटियों की सुख-शान्ति हरण कर
बसते जाते हैं नगर।
गाँवों की अमराई लेकर
नन्दनवन बन रहे शहर॥

जनता समझ रही शासन के
सौतेले व्यवहार को।
मानव सहन करेगा कब तक
युग के क्रूर प्रहार को?

विप्लव की चिनगारी बनती
टूटे उर की आह है।
तख्त पलटते, ताज बदलते,
बनती नूतन राह है॥

लाँघ रहा अन्याय आज
मर्यादा की दीवार को।
क्रुद्ध जवानी बदलेगी पर
जीवन की इस धार को॥

फैले कोई 'वाद' भले,
बर्बाद न हो जनता मगर।
विश्व-शान्ति को यही चुनौती
काल दे रहा है ठहर॥

दानवीर कौन हैं ?

ज़िन्दगी है आज सिर्फ़ नौजवान के लिये,
गर्म रक्त, स्वर्ण और शीश-दान के लिये ॥

दैत्य साम्यवाद का
चढ़ हिमाद्रि-शृङ्ग पर
बोलता जिहाद आज
'पंचशील' भङ्ग कर ॥

त्रास के लिए विशाल
सैन्य को सजा रहा।
बार-बार छेड़ सुप्त
सिंह को जगा रहा ॥

किन्तु जानता नहीं कि आन-बान के लिए,
जूझ जायेंगे सहस्त्र शूर शान के लिए ?
ज़िन्दगी है आज सिर्फ़ नौजवान के लिये,
गर्म रक्त, स्वर्ण और शीश-दान के लिये ॥

आज रूप-रङ्ग के
सिंगार का समय नहीं।
चाँद के दुलार और
प्यार का समय नहीं॥

जाग लेखनी कि छन्द
चन्द के समान हों।
हर जवान की जबान
पर ज्वलन्त गान हों॥

लाज लुट गई अगर तो जन्म व्यर्थ ही हुआ।
इसलिए कलम चले तो युद्ध-गान के लिए॥
ज़िन्दगी है आज सिर्फ़ नौजवान के लिये,
गर्म रक्त, स्वर्ण और शीश-दान के लिये॥

हार चाहते नहीं तो
हार को उतार दो।
सुनार की तरह चतुर
लुहार को दुलार दो॥

इम्तहान हो रहा कि
दानवीर कौन हैं?
धन-कुबेर मुक्त-हस्त
दे रहे कि मौन हैं?

खोल दो तिजोरियाँ कि अस्त्र-शस्त्र चाहिए।
आ गया सुवर्ण-काल स्वर्ण-दान के लिए॥
ज़िन्दगी है आज सिर्फ़ नौजवान के लिये।
गर्म रक्त, स्वर्ण और शीश-दान के लिये॥

जब जवान कर रहे हों
युद्ध की तयारियाँ,
हों सभी स्वकर्म-लीन
बाल - वृद्ध - नारियाँ,

कर्म जान कर प्रधान
ओ किसान ! ओ श्रमी !
जो जुटे रहो समोद
तो रहेगी क्या कमी ?

जीत है विकास में, इसलिए बढ़े चलो
एक राष्ट्र, एक भाव के प्रमाण के लिए ।।
ज़िन्दगी है आज सिर्फ़ नौजवान के लिये,
गर्म रक्त, स्वर्ण और शीश-दान के लिये ।।

आग क्रोध की अगर
न बर्फ़ को गला सके,
ज्वाल जोश की अगर
न काल को डुला सके,

तो न आग आग और
ज्वाल भी न ज्वाल है ।
खून खौलता नहीं जो
तो न खून लाल है ।।

गा जवान ! अग्नि-गान, वक्ष तान-तान कर ।
आ गया सुयोग आज प्राण-दान के लिए ।।
ज़िन्दगी है आज सिर्फ़ नौजवान के लिये,
गर्म रक्त, स्वर्ण और शीश-दान के लिये ।।

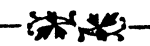

मानी माओ

भग जा रे मक्कार चीन ! अब भी भारत के द्वार से ।
वर्ना लेंगे खबर अभी हम संगीनों की धार से ।।

भारत बना एशिया – भर के
नैतिक बल की नाक है ।
और विश्व में नेहरू जी की
आज जमी जो धाक है ।।

इसीलिए तो मानी माओ
मन में झल्लाया जलकर ।
सोम दीप को बुझा सका है
किन्तु प्रभंजन क्या चलकर ?

जिसके मन में मैल नहीं, वह तो सिरमौर बनेगा ही ।
पर दम्भी ? तू सदा रहेगा वंचित इस अधिकार से ।।
भग जा रे मक्कार चीन ! अब भी भारत के द्वार से ।
बर्ना लेंगे खबर अभी हम संगीनों की धार से ।।

अरे व्याध ! सोये सिंहों पर
किया दगा से वार है।
सिद्ध हुआ पर हमला तेरा
बहुत बड़ा उपकार है॥

लगा समझने चालें तेरी
अब सारा संसार है।
सभी देश लांछना दे रहे
किसको तुझ से प्यार है?

सावधान हो अरे पहरुये ! तुम्हें देख फिर ग़फ़लत में
चीनी विषधर बैठ न जाये कहीं कुण्डली मार के?
भग जा रे मक्कार चीन ! अब भी भारत के द्वार से।
वर्ना लेंगे खबर अभी हम संगीनों की धार से॥

विषम महामारी अकाल में
लाखों चीनी मर रहे।
पीले पत्तों – से निरीह
जीवन पतझर में झर रहे॥

भूखे – नंगे जन का क्रन्दन
मगर कौन सुनता वहाँ?
है सत्ता का ज़ोम जिसे वह
जन – हित को गुनता कहाँ?

आज नहीं तो कल जनता की आह बनेगी चिनगारी।
होगी कहीं भयंकर जो भस्मासुर के कर - भार से॥
भग जा रे मक्कार चीन ! अब भी भारत के द्वार से।
वर्ना लेंगे खबर अभी हम संगीनों की धार से॥

घर में घोर अँधेरा, मस्जिद
में तू दीप जलाता है।
साम्यवाद की आड़ लिये रे !
दुराचार फैलाता है ।।

इसीलिए जो क्रान्ति मची है
घर में, प्रथम सम्हाल तू।
अपनी नेतागीरी का ही
करता रह न खयाल तू ।।

सत्ता हथियाने का माओ पर जो भूत सवार है,
ले डूबेगा, बच न सकेगा चीन क्रान्ति के ज्वार से ।।
भग जा रे मक्कार चीन ! अब भी भारत के द्वार से ।
वर्ना लेंगे खबर अभी हम संगीनों की धार से ।।

भारत की ही नहीं, विश्व के
स्वाभिमान की बात है।
धूर्त चीन चालाक चील - सा
अभी लगाये घात है।

नहीं दबा सकता है कोई
जनता की आवाज़ को।
क्या न शान्ति के दूत कबूतर
मार सकेंगे बाज़ को ?

हमने बोया प्रेम, विश्व के घर-घर से सद्भाव मिला।
तूने बोकर बीज अग्नि के देखे स्वप्न बहार के ।।
भग जा रे मक्कार चीन ! अब भी भारत के द्वार से ।
वर्ना लेंगे खबर अभी हम संगीनों की धार से ।।

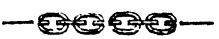

रक्त का प्रमाण दो

अस्त - व्यस्त हो रही है
ज़िन्दगी समाज की।
'कल' खिला वसन्त, कब्र
खुद रही है 'आज' की ॥

सुन रहा हूँ आज सिर्फ़
मार - मार की रटन।
उठ रहा धुआँ कि शान्ति
को हुई नई घुटन ॥

कुछ गिने - चुने मदान्ध
कर्णधार चीन के
कह रहे यही कि विश्व-
बाटिका उजाड़ दो ॥

दे रहे सुगन्ध जो
गुलाब और मोतिया
उन्हें झटक - पटक समूल
आज ही उखाड़ दो ॥

किन्तु तुम सपूत हो तो
शत्रु को जवाब दो—
कि शान्ति के पुजारियों का
जोश है घटा नहीं।

थी बड़ी गरज - तरज कि
शक्ति का न पार था,
किन्तु सत्य के समक्ष
लङ्केपति डटा नहीं॥

नाज़ियों का ज़ोर - शोर
था किसी समय ज़रूर।
किन्तु काल से बिहाल
हिटलरी चली नहीं॥

सत्य - मार्तण्ड की
चमक - दमक पुनः बढ़ी!
तेज - पुंज धूम्र में
घिरा, मगर दबा नहीं॥

चाहते तो चीन के
विरुद्ध युद्ध ठानते,
पर प्रहार को दयार्द्र
भाव रोकता रहा।

और दस्यु छद्म वेश
में यहाँ घुसा - घुसा,
पूर्वजों की आन-बान—
शान लूटता रहा॥

सह लिया बहुत उठो
कि ज़िन्दगी मचल उठे।
झोंपड़ी के संग – संग
आज हर महल उठे॥

मान के लिए जवान!
आ पड़े तो जान दो।
आ गया समय सपूत!
रक्त का प्रमाण दो॥

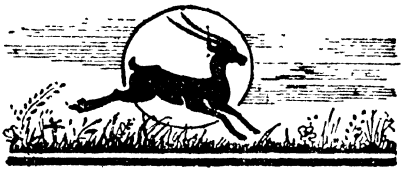

नेफ़ा - युद्ध

वीरों की संतान ! उठो अब पहनो फ़ौजी बाना।
आज़ादी का मोल अभी तुमको है और चुकाना ।।

पन्द्रह अगस्त सन् सैंतालिस को
बन्धन टूट चुके हैं।
किन्तु नही साम्राज्यवाद के
अत्याचार रुके हैं ।।

उन्नति-पथ पर हमें देखकर
चढ़ा चीन का पारा।
लाल फ़ौज ने सीमा पर
धोखे से छापा मारा ।।

हुई भंग सुख-नींद शत्रु को
तब हमने ललकारा–
'भग जा वहीं जहाँ से आया,
आगे पग न बढ़ाना ।।'

वीरों की सन्तान ! उठो अब
पहनो फ़ौजी बाना।
आज़ादी का मोल अभी
तुमको है और चुकाना ।।

जब तवांग पर चीनी सेना
छाई टिड्डी - दल - सी,
और जंग में जंग छिड़ा तो
हुई परीक्षा बल की ।।

एक-एक हिन्दी पर टूटे
सौ - सौ चीनी दुश्मन ।
सनन्-सनन् चल उठीं गोलियाँ,
हुआ घोर रण-गर्जन ।।

बीन-बीन कर मारे चीनी,
किया जंग पर कब्ज़ा ।
जब पेकिंग ने सुना पराभव,
तो माओ पगलाना ।।

वीरों की सन्तान ! उठो अब
पहनो फ़ौजी बाना ।
आज़ादी का मोल अभी
तुमको है और चुकाना ।।

एक साथ ही कई चौकियों
पर अब हमला बोला ।
गोली के उत्तर में माओ
ने बरसाया गोला ।।

हुई ध्वस्त भारत की टुकड़ी,
भाग्य हमारा डोला ।
जंग-पतन के साथ-साथ ही
गया हाथ से ढोला ।।

फिर भी रहे जूझते रण में
बचे-खुचे कुछ सैनिक।
क्योंकि नहीं सीखा भारत ने,
डर कर शीश झुकाना॥

वीरों की सन्तान! उठो अब
पहनो फ़ौजी बाना।
आज़ादी का मोल अभी
तुमको है और चुकाना॥

नेफ़ा में वालोंग-पतन सुन
रोष बढ़ा वीरों का।
स्वाभिमान हिल गया पुरातन
मानी प्राचीरों का॥

लगीं गरजने तोपें रह-रह
सेला की घाटी में।
और बोमडीला का उन्नत
भाल मिला माटी में॥

होशियार सिंह-से वीरों ने
मगर दिखाया लड़कर—
'खेल नहीं होता शेरों को,
ज़ंजीरें पहनाना॥'

वीरों की सन्तान! उठो अब
पहनो फ़ौजी बाना।
आज़ादी का मोल अभी
तुमको है और चुकाना॥

बड़ी उदासी से नेफ़ा ने
देखा प्रत्यावर्तन।
क्रान्त भूमि का कण-कण लेकिन
धधक उठा शोला बन॥

उधर रूस ने बन्द कर दिया
देना सैन्य सहारा,
और विश्व की मानवता ने
चाऊ को धिक्कारा॥

रुका चीन-अभियान क्योंकि था
और न कोई चारा।
एक बार फिर मूल सत्य को,
मानव ने पहचाना॥

वीरों की सन्तान! उठो अब
पहनो फ़ौजी बाना।
आज़ादी का मोल अभी
तुमको है और चुकाना॥

साम्यवाद की दीवारों में
पड़ती देख दरारें,
बैरी की अभिलाषाओं की
ढहने लगीं कगारें॥

नहीं बन सका महल हवाई
हिंसक दानवता का।
लगी विश्व-भर में फहराने
फिर सद्वृत्ति - पताका॥

किन्तु सभ्य संसार सतत्
चौकन्ना बना रहे–
कि रक्त-धार में कहीं न धरती
को फिर पड़े नहाना ।।

वीरों की सन्तान ! उठो अब पहनो फ़ौजी बाना ।
आज़ादी का मोल अभी तुमको है और चुकाना ।।

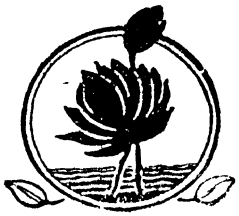

तू पत्थर हनता जाता है !

हमने तो बन्धुत्व निभाने
को ही हाथ बढ़ाया था।
जब सबने दुत्कार दिया,
तब भी हमने अपनाया था।।

राष्ट्र-संघ में लाने को
हमने कब-कब क्या नहीं किया ?
विश्व - कचहरी में जा - जाकर
हमने तेरा पक्ष लिया।।

तेरे यश - रक्षण में विष - से
अपमानों के घूँट पिये।
निर्मल उर - दर्पण के लेकिन
तूने शत-शत टूक किये।।

हमने दूध पिलाया पर तू
विषधर बन डसने आया।
प्रीति - रीति, विश्वास सभी को
लेकिन तूने दफ़नाया।।

सदा भलाई करने में जो
हमने मोल बुराई ली,
बदला चुका दिया हमला कर
यह तूने चतुराई की !

तू पत्थर हनता जाता है,
हम कब तक फल - दान करें ?
देव और दानव की कैसे
रे कृतघ्न ! पहचान करें ?

ज्यों मरने के पूर्व चींटियों
के नव पंख निकलते हैं,
त्यों ही तुझमें सर्वनाश के
चिह्न आज कुछ दिखते हैं ।।

निश्चय तेरा चन्द्र छिपेगा
और अमावस आयेगी ।
कीर्ति - चन्द्रिका मगर यहाँ तो
निशि - दिन बढ़ती जायेगी ।।

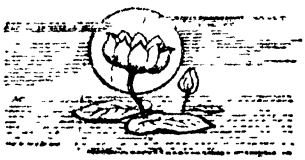

रण में मरना ही जीवन है

नया खून है, नया जोश है, फिर डरने की कौन बात है ?
रण में मरना ही जीवन है, किन्तु पलायन आत्मघात है ।।

आज़ादी का लाल अरे ! जब
सोलह का भी हुआ नहीं था,
तब तक चीनी चक्र-व्यूह का
जाल बिछ गया कहीं-कहीं था ।।

पर अभिमन्यु बना हर बालक, चक्र-व्यूह क्या नई घात है ?
नया खून है, नया जोश है, फिर डरने की कौन बात है ?

सीधा - सादा मानवता का
निश्छल पथ हमने अपनाया ।
सुखमा के मन्दिर में लेकिन
दर्पी दुष्ट दस्यु घुस आया ।।

धूर्त कहीं क़ाबू में आता, जब तक पड़ती नहीं लात है ?
नया खून है, नया जोश है, फिर डरने की कौन बात है ?

हमने काम लिया था अब तक
सोच-समझ कर बड़ी शान्ति से ।
कंस - दलन भी मगर किया है,
जग जा अब भी भ्रमित भ्रान्ति से ।।

मान हमें प्राणों से बढ़कर, तू तो नकटा जन्म-जात है ।
नया खून है, नया जोश है, फिर डरने की कौन बात है ?

उठता कभी बवंडर ऐसा,
भरी धूल उठ गगन चूमती।
चूर - चूर चाओ की हस्ती
आज मगन हो मस्त झूमती ।।
किन्तु धूल नीचे फिर आती, जैसे दिन के बाद रात है।
नया खून है, नया जोश है, फिर डरने की कौन बात है ?

चले गए चंगेज़, सिकन्दर,
स्टालिन - से नर फ़ौलादी।
चले गए नौरङ्ग शाह भी
अविश्वास ने की बर्बादी ।।
लाल चीन के नादिरशाहों की फिर बोलो क्या बिसात है ?
नया खून है, नया जोश है, फिर डरने की कौन बात है ?

सत्यवाद के हरिश्चन्द्र को
कठिन काल कसने आया है।
पर क्या तिमिर - सिन्धु में डूबा
अरुण न प्रातः मुसकाया है ?
अकड़ रहा है, मगर चीन की वैसे तो हो चुकी मात है।
नया खून है, नया जोश है, फिर डरने की कौन बात है ?

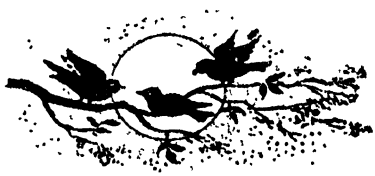

माँग रहा सिंदूर माँग का

माँग रहा सिंदूर माँग का फिर तुमसे कुर्बानी।
शत्रु सामने, फिर क्या रुकना ? बढ़ो, बढ़ो बलिदानी ।।

हुई हार नेफ़ा में लेकिन
हार न उसको मानो।
उसे जीत के कंठ-हार की
तरह वीर ! पहचानो ।।

क्यों कि उसी ने आँखें खोलीं,
दूर हुआ सब सम्भ्रम।
फूल चेतना का फिर फूला,
झरी भावमग शबनम ।।

इसके पहले युद्ध-स्तर पर
की न अरे तैयारी !
दावानल से भस्मसात्
होती वन-वसुधा सारी !!

जब कुत्सा की ठोकर खाकर मानवता अकुलानी,
चढ़ा देश के लौह-शौर्य पर वही पुरातन पानी ।।
माँग रहा सिंदूर माँग का फिर तुमसे कुर्बानी।
शत्रु सामने, फिर क्या रुकना ? बढ़ो, बढ़ो बलिदानी ।।

'अब हम भी तैयार'—देश का
कण-कण बोल रहा है।
सुनकर सिंह-निनाद शत्रु का
आसन डोल रहा है॥

मंदिर - मस्जिद - गिर्जाघर-
गुरुद्वारे एक हुए हैं।
दल - बन्दी, वैषम्य - भाव भी
कुछ तो नेक हुए हैं॥

'पहले देश, व्यक्ति है पीछे'—
ऐसा भाव प्रबल है।
जगा हिमालय, सागर जागा,
लहरों में हलचल है॥

गंगा-झेलम-ब्रह्मपुत्र का खौल रहा है पानी।
युद्ध-कसौटी पर कसने को तत्पर आज जवानी॥
माँग रहा सिंदूर माँग का तुमसे फिर क़ुर्बानी।
शत्रु सामने, फिर क्या रुकना? बढ़ो, बढ़ो बलिदानी॥

जिस जननी के उपकारों का
तुम पर बोझ लदा है,
लाल लाड़ले का दुख जिसने
खुद ही सहा सदा है,

व्यजन डुलाकर तुम्हें सुलाया,
प्रखर ताप खुद झेला,
आँधी - शीत - झड़ी सब दीपक
सहता रहा अकेला,

जिसकी साँस-साँस में सुत के
चिर सुख का सपना है,
समझा जिसने सुत के सुख-दुख
को सुख-दुख अपना है,

आँख नटेरेगा यदि कोई उस माँ पर अभिमानी,
दौंच दिया जायेगा तत्क्षण जो फिर की नादानी।
माँग रहा सिंदूर माँग का तुमसे फिर क़ुर्बानी।
शत्रु सामने, फिर क्या रुकना ? बढ़ो, बढ़ो बलिदानी ॥

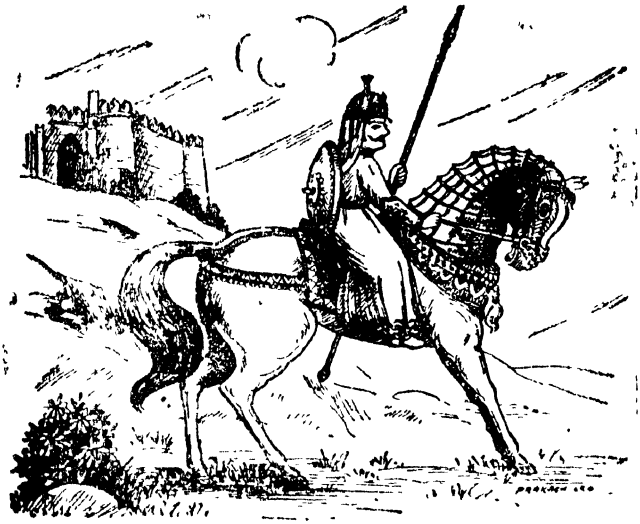

जननी का कर्ज़

प्रण करो आज ही राणा बन जननी का कर्ज़ चुकाओगे।
यह जान भले ही जाय, शत्रु के सम्मुख सिर न झुकाओगे॥

हर साल जयंती के दिन हम
राणा की याद किया करते,
श्रद्धा से भाव-प्रसूनों की
अंजलियाँ भेंट किया करते।

यश-गाथा जिसकी लिखते ही
लेखनी अमर हो जाती है,
भावना-सिन्धु में स्वर-लहरी
तन्मय होकर खो जाती है॥

लाड़ले लाल की अभिलाषा
संकट में तृप्त तभी होगी,
रणचंडी को मुंडमाल जब
हँस - हँसकर पहनाओगे।
प्रण करो आज ही राणा बन
जननी का कर्ज चुकाओगे।।

जिसके चेतक की टाप अभी
सुन पड़ती हल्दीघाटी में,
जिसके कृत्यों की महक भरी
अब तक मेवाड़ी माटी में,

जब सहे वार पर वार तभी
जिसका जीवन मुसकाया था,
चप्पे - चप्पे के रक्षण में
लोहू का अर्घ्य चढ़ाया था।।

उस प्रताप का जन्म-दिवस
यदि सचमुच तुम्हें मनाना है,
तो करो अभी संकल्प शत्रु
को चकनाचूर बनाओगे।
प्रण करो आज ही राणा बन
जननी का कर्ज चुकाओगे।।

जो रहा भटकता इधर-उधर
पच्चीस वर्ष तक वन-वन में,
जिसके जीवन का सौख्य पला
काँटों के कामद कानन में,

जिसकी समता का दुनिया में
स्वातंत्र्य-पुजारी हुआ नहीं,
माँ का न कटा बन्धन जब तक
फूलों को तब तक छुआ नहीं ।।

उस महामहिम के जीवन का
सच्चा सम्मान तभी होगा,
जब माँ के पतझड़-से जीवन
को तुम मधुमास बनाओगे।
प्रण करो आज ही राणा बन
जननी का कर्ज़ चुकाओगे ।।

झुक गया मान जिसके आगे,
रुक गया प्रभंजन मुगलानी,
जिसने जीवन-भर मोगद्दल
से युद्ध रचाने की ठानी।

मानी अकबर भी मान गया
था जिसके लोहे का पानी,
अब तक न हुआ, अब क्या होगा
उसकी सानी का बलिदानी ?

जिसने तन-मन-धन वार दिया,
उसका गुण-गान तभी होगा,
जब उसका ही आदर्श लिए
बलि-पथ पर बढ़ते जाओगे।
प्रण करो आज ही राणा बन
जननी का कर्ज़ चुकाओगे ।।

स्वातंत्र्य-सूर्य की एक किरण
जीवन को सफल बना सकती,
माँ के अरमानों की कलियाँ
छूते ही सहज खिला सकती।

जिस तेज-पुंज से तिमिर दासता
का पल में हट सकता है,
जग का संकुल अन्याय नहीं
जिसके सम्मुख डट सकता है॥

उस प्रताप की अमर आत्मा
को सन्तोष तभी होगा,
जब माँ के अनमोल मोतियों
का कुछ मोल चुकाओगे॥

यह जान भले ही जाय शत्रु के सम्मुख सिर न झुकाओगे।
प्रण करो आज ही राणा बन जननी का कर्ज़ चुकाओगे॥

घर की फूट

घर की फूट बुरी होती है,
दुश्मन लाभ उठाता है।
सुदृढ़ दुर्ग लंका - सा बातों-
बातों में ढह जाता है॥

बना मीर ज़ाफ़र जब क्विस्लिंग
बंग-भूमि का पतन हुआ।
एक देश-द्रोही के कारण
नाहक माँ का हनन हुआ॥

क्रुद्ध शक्तिसिंह का राणा के
दुश्मन से न मेल होता,
तो मेवाड़ - केसरी क्योंकर
अपना सुख - वैभव खोता?

ज्योंही मान बना संरक्षक
मुग़ल - राज्य की ड्योढ़ी का,
उतर गया पानी मोती का,
मूल्य हुआ दो कौड़ी का ।।

गया मान का मान नहीं, वह
शान देश की धूल हुई।
पद-लिप्सा के कारण माँ के
एक पूत से भूल हुई ।।

ऐसी भूल कि जिसके कारण
बही रक्त - रंजित - धारा।
मुक्त साँस को अपने ही
भाई के हाथ मिली कारा ।।

गिरे आँख में अगर किरकिरी
तो क्या हाथ नहीं उठता ?
वह जीवन क्या देख सके जो
मुख - सिन्दूर कहीं लुटता ?

होता है मत - भेद परस्पर
तो न झगड़ कर निपटाओ।
चढ़े बाहरी शत्रु अरे ! तब
तो आपस में मिल जाओ ।।

धड़ से शीश उतार दो

दब्बूपन से काम चला कब ?
दुश्मन को ललकार दो।
करे अगर गद्दारी कोई,
धड़ से शीश उतार दो॥

यह मत समझो सिर्फ़ चीन ही
शत्रु तुम्हारा आज है।
पाक-चीन के हेल-मेल में
छिपा बहुत कुछ राज़ है॥

डॉलर का एहसान न माना
जिस बल पर हूला-फूला।
पाकिस्तानी कृतघ्न शासक
जाने किस भ्रम में भूला ?

आस्तीन के साँप को न तुम
मन का संचित प्यार दो।
करे अगर गद्दारी कोई,
धड़ से शीश उतार दो॥

साँप रहेगा साँप भले ही
निशिदिन दूध पिलाओ तुम।
महुअर बजा - बजाकर चाहे
जितना जी बहलाओ तुम ॥

शत्रु तुम्हारी सज्जनता से
पूरा लाभ उठायेगा।
तुम्हें बेख़बर पाकर धोखे
में डसकर भग जायेगा।

इसीलिए डसने से पहले
उसे कुचल कर मार दो।
करे अगर गद्दारी कोई,
धड़ से शीश उतार दो ॥

जिसकी बात - बात में नफरत
की दुर्गन्ध रही आती,
जिसकी कपट - नीति से दबकर
स्वयम् घृणा भी शर्माती,

भारत को अपमानित करने
का ही लक्ष्य रहा जिसका,
फँस मत जाना बड़ा भयंकर
बातों का दलदल उसका ॥

कोरे आदर्शों को छोड़ो,
समझो इस संसार को।
करे अगर गद्दारी कोई,
धड़ से शीश उतार दो ॥

भारतवासी मुसलमान सब
भारत के ही साथ हैं।
हिन्दू - मुस्लिम भारत माँ के
दायें - बायें हाथ हैं।

काश्मीर शत बार कह चुका
है डंके की चोट पर
'आँख दिखाई अगर किसी ने
पी जायेंगे घोंट कर ।।'

कभी न लुटने देना वीरो !
तुम माँ के शृङ्गार को।
करे अगर गद्दारी कोई,
धड़ से शीश उतार दो।

जीना है तो बलवान बनो

वीरो ! क्या संकट-वेला में माँ का स्तन्य लजाओगे ?
या पुरुषसिंह साँगा बनकर रण-मध्य जूझने जाओगे ?

बापू से हमको प्रेम मगर
दब रही अहिंसा की लाली ।
घिरती आती है शनैः शनैः
हिंसा की आभा मतवाली ।।

लग रही दौड़ शस्त्रास्त्रों की
सत्ता का पागलपन लेकर ।
अब तुम्हीं पार कर सकते हो
मानवता की नैया खे कर ।।

जो हुआ न अरि का दर्प-दलन, उपहास करेगी दुनिया-भर ।
राणा प्रताप ! क्या सीमा को हल्दीघाटी न बनाओगे ?
वीरो ! क्या संकट-वेला में माँ का स्तन्य लजाओगे ?
या पुरुषसिंह साँगा बनकर रण-मध्य जूझने जाओगे ?

हम बने युधिष्ठिर न्याय-डोर
थामे ही अब तक खड़े हुए।
घर में घुस दुश्मन 'और-और'
हमसे लेने को अड़े हुए॥

आसुरी वृत्तियों से प्रेरित
छिड़ गया दुबारा युद्ध कहीं।
अस्तित्व मिटेगा जग-भर का
डूबेगा केवल हिन्द नहीं॥

दुर्योधन हमें दबाने को तब तक बढ़ते ही जायेंगे,
चप्पे-चप्पे को कुरुक्षेत्र जब तक अर्जुन! न बनाओगे।
वीरो! क्या संकट-वेला में माँ का स्तन्य लजाओगे?
या पुरुषसिंह साँगा बनकर रण-मध्य जूझने जाओगे?

निर्दोष मृगों के झुंडों को
केहरी मार कर धर देता।
झंझा का झोंका पेड़ों से
फल-फूल तोड़ कर कर लेता॥

जीना है तो बलवान बनो,
कमज़ोरी पाप कहाती है।
ज़िन्दगी सबल की छाया बन
निर्बल को बहुत चिढ़ाती है॥

चंगेज़, सिकन्दर, सिल्यूकस फिर भारत पर चढ़ आयेंगे।
पुरुराज! न जो हुंकार आज तुम रण का बिगुल बजाओगे॥
वीरो! क्या संकट-वेला में माँ का स्तन्य लजाओगे?
या पुरुषसिंह साँगा बनकर रण-मध्य जूझने जाओगे?

स्वतंत्रता-संग्राम

आज़ादी का मर्म सदा वीरों ने ही पहचाना।
इसीलिए वीरों की गाथा गाता रहा ज़माना॥

डलहौजी ने अँगरेज़ी
शासन की नीव जमाई।
'शक्ति - संतुलन' नीति
बड़ी चतुराई से अपनाई॥

एक राज्य को हड़प,
दूसरे पर झण्डा फहराया।
शनैः शनैः सम्पूर्ण देश
उसके कब्ज़े में आया॥

एक-दूसरे को आपस में
कुछ ऐसा लड़वाया,
कि अल्पकाल में दिल्ली का
सिंहासन हुआ बिराना॥
आज़ादी का मर्म सदा
वीरों ने ही पहचाना॥

बन्द पेशवा के करने को
थी बिठूर की कारा।
सिन्ध, वंग, पंजाब और
जीता तंजौर, सतारा॥

ब्रह्मदेश, कर्नाटक जीते
थी झाँसी की बारी॥
उस विधवा का राज्य हड़पना
जो सचमुच अधिकारी॥

भड़क गई वन-वह्नि गगन छू
चलीं ज्वाल – जिह्वायें।
कूद पड़ी रण की लपटों में
"लक्ष्मी" बन मर्दाना॥
आज़ादी का मर्म सदा
वीरों ने ही पहचाना॥

यो सत्तावन में आज़ादी का
पहला युद्ध छिड़ा था।
जब भारत बर्बर सत्ता से
डट कर खूब भिड़ा था॥

झाँसी, दिल्ली औ' मेरठ में
जीवन--ज्योति जगी थी।
दूर फिरंगी को करने की
ज्वाला सुलग रही थी॥

आज़ादी के परवानों ने
प्राण हाथ में लेकर
भारत के कोने--कोने में
युद्ध भयङ्कर ठाना ॥
आज़ादी का मर्म सदा
वीरों ने ही पहचाना ॥

पूना, पटना और लखनऊ
के उन मैदानों को,
पन्त, पेशवा, नाना अरु
धुन्दू--से मर्दानों को,

सहज भूल सकता है कोई—
ये स्वातंत्र्य — पुजारी ?
होम दिया हँसते--हँसते
प्राणों को बारी-बारी ॥

कुँवर सिंह--टीपू ने मरते--
मरते यही सिखाया—
'संगीनें धँस जायँ वक्ष में,
तो भी सिर न झुकाना।'
आज़ादी का मर्म सदा
वीरों ने ही पहचाना ॥

सन् बीस और अट्ठाइस मे भी
जली क्रान्ति की ज्वाला।
याद रहेगा 'डायर' वाला
भीषण 'जलियाँ वाला' ॥

बापू, नेहरू अरु पटेल ने
फिर जनता को जोड़ा।
असहयोग – आन्दोलन कर
कानून नमक का तोड़ा।।

आज़ादी के जिस पौधे को
लोकमान्य ने सींचा।
सम्भव नहीं खिज़ाँ आने पर
भी उसका मुरझाना।।
आज़ादी का मर्म सदा
वीरों ने ही पहचाना।।

फिर सन् बयालीस ने देखा
जनता का आन्दोलन।
लगा धधकने प्रतिहिंसा से
जन – जीवन का मधुवन।।

महाक्रांति के महायज्ञ की
लपटें भू पर छाई।
लन्दन में सनसनी मची,
दुनिया हैरत में आई।।

देने लगे समुद आहुतियाँ
वीर क्रान्ति के मख में।
बिखर गया सौरभ कण–कण मे
सुन कर मुक्त तराना।।
आज़ादी का मर्म सदा
वीरों ने ही पहचाना।।

वैसे तो आज़ाद हो चुके
पर खप्पर खाली है।
रणचण्डी की प्यास बुझाये
वही भाग्यशाली है॥

नया चमन है, अतः चाहिये
माली रखवाली को।
सींच सके शोणित से जो जड़
अरु डाली--डाली को॥

माँ के चक्षु न होने देंगे
गीले अश्रु-कणों से।
हमको चाहे जन्म-जन्म तक
शोणित पड़े बहाना॥
आज़ादी का मर्म सदा वीरों ने ही पहचाना।
इसीलिए वीरों की गाथा गाता रहा ज़माना॥

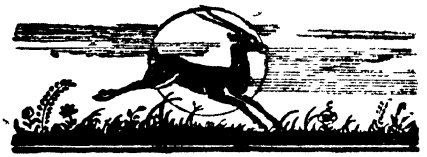

चाऊ चच्चा ! यहु कहा कीन ?

चाऊ चच्चा ! यहु कहा कीन ?
अपने ही भाय-भतीजन का कुसुमय मा गरवा घोंटि दीन ।।

नेहरू जी हमरे चाचा हैं,
तुम्हरे हू हैं बड़कवा भाय ।
तुम उनका दद्दा कहिन रहेउ
सन् चउअन मा पेकिंग बुलाय ।।
बोलिन– 'भारत औ' चीन दुऊ
हैं याक कि जस है सलिलु-मीन ।'
चाऊ चच्चा ? यहु कहा कीन ?

फिरि तौ सम्बन्धहु बढ़ै लाग,
जस बढ़िन रहै द्रौपदी - चीर ।
बलदाऊ औरु कन्हैया-अस
तब रहिन लगै हम तीर-तीर ।।
जब गरे मिलिन तौ पीठी मा
ध्वाखा दै चक्कू भौंकि दीन ।।
चाऊ चच्चा ! यहु कहा कीन ?

नेहरू जी अपनावा तुमका
जैसे कुइ होइ सगा भाई ।
उसतरा गरे पै चलै लाग,
तब समझिन, तुम तौ हौ नाई ।।
भैया - चारे कै सरबत मा
तुम यहु का बिसु-अस घोरि दीन ?
चाऊ चच्चा ! यहु कहा कीन ?

आज़ाद भइन, तौ मेहनत करि
हम धीरै-धीरै बढ़ै लाग।
दुनिया मा हमरी पूछ भइन,
तौ तुम मन-मन मा जरै लाग॥
झुँझलाइ हिमानी घाटिन का
गोली-गोलनु तै पाटि दीन॥
चाऊ चच्चा! यहु कहा कीन?

हुइगा नुकसान करोरनि का,
फिरि हू जौ हमरे पाँउ परउ,
तौ छमा तुम्हैं करि सकित अबै,
इन बातनि पै परतीति धरउ॥
नहिं, हम अपनी पै आइ गइन,
तौ मारब तुमका बीन-बीन॥
चाऊ चच्चा! यहु कहा कीन?

अउसर यहु बहुतै बढ़िया है,
इहि का न हाथ से जान देउ।
हम मानहि खातिर जान दीन्ह,
तुम मान लेउ या जान देउ॥
अपमान नहिन सहि सकित औरु,
अब तौ हम मन मा ठानि लीन॥
चाऊ चच्चा! यहु कहा कीन?

जयचन्दन तैं तुम बचे रहेउ

जयचन्दन तैं तुम बचे रहेउ ।
जानै कब फिरि छिड़ि जाइ जुद्ध,
तुम बीर बेस में सजे रहेउ ।।

दुसमन कै दहसति खाइ-खाइ
जो खीस निपोरत करइँ बात ।
पाछे तैं मारैं डींग औरु
उँटुआ-जस जो-जो बलबलात ।।
जो-जो अउसर पै दुम दबाइँ,
ऐसे स्यारन तैं बचे रहेउ ।।
जयचन्दन तैं तुम बचे रहेउ ।।

सह पाइ-पाइ जिन लोगन की
अजहूँ दुसमन कै गलइ दाल ।
औ' जिनकी-जिनकी मदद पाइ
उहि ऐंठि-ऐंठि कै चलइँ चाल ।।
जिन बिल्कुल लुटिया डुबै दीन,
उन गद्दारन तैं बचे रहेउ ।।
जयचन्दन तैं तुम बचे रहेउ ।।

जो देस-भगति का भरइँ स्वाँग,
बस खादी कै टोपी लगाय ।
चन्दा का पैसा खाइ - खाइ
फूले लहिला - जस लहलहायँ ।।
पाखण्डी औ' अउसरवादी
ऐसे नेतन तैं बचे रहेउ ।।
जयचन्दन तैं तुम बचे रहेउ ।।

माँ की आँखिन के मोतिन का
है जौन मन्सवा बेचि सकित ।
बन दूसासन द्रौपदी---चीर
जो भरी सभा मा खैंचि सकित ।।
ऐसे लोभिन तै बचे रहेउ,
निर्लज्जन तै हू बचे रहेउ ।।
जयचन्दन तै तुम बचे रहेउ ।।

जिहि का पुरखनु पै गरब नहिन,
उहि की नस-नस मा पानी है ।
दुसमन का देखि न उबलि जाइ,
तौ का उहि जोसु जवानी है ?
जो लेइ न गौरी के परान,
ऐसे बानन तै बचे रहेउ ।।
जयचन्दन तै तुम बचे रहेउ ।।

चीनी कुण्डलियाँ

(१)

चाली चाऊ के सरिस नज़र न आवै कोय ।
अब लौं तौ जनमौ नहीं, औरु न आगे होय ।।
औरु न आगे होय, चालि में कंस पछारौ ।
हिरनाकुसहू फित्तु नरक में मारौ—मारौ ।।
नरक—लोक में एक सीट अजहूँ है खाली ।
रिज़रव लेउ कराय, जाउ झट चाऊ चाली ।।

(२)

रग–रग में तो बिसु भरो, औ' अधरनु पै प्यार ।
धरती पै मिलि है कहाँ माओ–सौ मक्कार ?
माओ—सौ मक्कार, नदी में जैसे मगरा ।
हड़बड़ाय धरि लेइ, मिलै तगड़े तैं तगड़ा ।।
ऐसौ धूर्त, लवार, न अबलौ देखौ जग में ।
दन्द-फन्द, छलु–कपटु भरो जाकी रग–रग में ।।

(३)

चक्का दोऊ चलि रहे, सायकिल पीछे जाय ।
रोकेहु तै रुकती नहिन, ब्रेकहु गए झुठाय ।।
ब्रेकहु गए झुठाय, अजब हैरानी अटकी ।
सलिलु कहाँ रुकि पाइ, होय जो फूटी मटकी ?
सुख सपनौ है जाय, होंहि जहँ चोर–उचक्का ।
सायकिल कत बढ़ि पाय, बेतुके दोऊ चक्का ।।

(४)

बार-बार छल-छद्म करि, साखिहु दई गँवाय ।
दुनियाँ थू-थू करि रही, चाऊ ! चों पछिताय ?
चाऊ ! चों पछिताय ? बुबै सो लुनै यहाँ तौ ।
बोइ बँबुरिया - बीजु, खाइगौ आम कहाँसों ?
तेरी करनी सों भई, तेरी मट्टी ख्वार ।
कबहूँ हाँड़ी काठ की, चढ़ी है दूजी बार ?

(५)

लोटा चीनी लुढ़कनौ, जामें पेंदी नाँइ ।
मुकरि जाय दै कै बचन, सौ सौगन्दे खाइ ।।
सौ सौगन्दें खाइ, धरै कर तपे तवा पै ।
फिरिहू को पतियाइ, फिरै जो चढ़ौ हवा पै ।।
अकलि ठिकानै आइ, परै जो हनि कै सोटा ।
टूक-टूक हुइ जाय लुढ़कनौं चीनी लोटा ।।

(६)

थूकि-थूकि कै चाटिबौ, चाऊ ! तोइ सुहाय ।
तू चंगेज़ी चालि कों रह्यौ आजु अपनाय ।।
रह्यौ आजु अपनाय, सीख भानी पुरखनु की ।
पर दसरथ ने करी कहाँ चिन्ता या तनु की ?
हमरौ तौ जीवन वृथा, बात जाहि जो चूकि ।
पर तेरे अपघात पै रह्यौ विश्व-भरि थूकि ।।

(७)

सीधी अँगुरी सों कहूँ, घीउ निकारतु कोय ?
काम बनावै काहु विधि, चतुर कहावतु सोय ।।
चतुर कहावतु सोय, जो न धोखे में आवै ।
जो धरि पावै चोर, चाँदि में चारि जमावै ।।
लाख बिड़ारौ धँसति खेत में पड़िया गीधी ।
डंडा कसि कै देउ, बुर्रकति जैहै सीधी ।।

(८)

चीनी इज्जति होति है सरे आम नीलाम ।
दुइ कौड़ी की बात है, बढ़ौ लगाओ दाम ।।
बढ़ौ लगाओ दाम, नाक नकटा की काटौ ।
दुइ कौड़ी में कहा होइगौ तुम्हरो घाटौ ।।
चाऊ ने ललचाइ हमारी भुँइ का छीनी ?
मिली धूरि में बची-खुची हू इज्जति चीनी ।।

(९)

चारि सवारी लै चली साम्यवाद की कार ।
खूश्चेव ड्राइव करै, टीटो गाइ मल्हार ।।
टीटो गाइ मल्हार, किन्तु चाऊ चिल्लावै ।
माओ पीछै काँव-काँव करि शोर मचावै ।।
वैसे दौड़ी जाति है कार सँभारि-सँभारि ।
एक्सिडेन्ट जो कहुँ भयौ मरैं चारि के चारि ।।

(१०)

लोडर नामी चारि हैं, बाकी हैं बेकार।
दुइ तौ कछु भोले लगै, हैं दुइ निपट गँवार॥
हैं दुइ निपट गँवार चीन के चाऊ-माऊ।
टीटो के सामुनै लगत बछिया के ताऊ॥
खूश्चेव है मद्दु न बाकौं काहू कौ डर।
कौन बन्तु है देखें साम्यवाद कौ लीडर?

(११)

माओ सरपट चलि रह्यौ, अब हिटलर की चाल।
तिब्बत ही हड़प्यौ अबै, आगे कौन हवाल?
आगे कौन हवाल, पड़ौसिन में भय छायौ।
पाकिस्तानहु तौ बाकी बातनि में आयौ॥
हम तिब्बत के नाँइ, हमे मति आँखि दिखाओ।
भुँइ मे दैहैं ठाँसि, नही तौ जाओ माओ॥

(१२)

जग में जाहिर है गई, माओ! तेरी नीति।
ताही सों तू हारि है, कबहुं न सकि है जीति॥
कबहुं न सकि है जीति, अरे ओ गंगू तेली!
नेहरू राजा भोजु, ताहि सो इतनी झेली॥
बचौ नाँइ है कोय, जु आयौ हमरे मग में।
सूरज को परतापु मिटायो कौनें जग में?

अमर शहीद शैतान सिंह

(१)

उत्तराखंड के हिमाच्छन्न शिखरों पर
जब मड़राये सहसा बारूदी बादल,
तन गई भ्रकुटियाँ त्यों ही भारत माँ की,
मच गई अहिंसा के जीवन मे हलचल ।।

(२)

माँ बोली-सो जा लाल, नीद क्यो खोता ?
मैं दुर्गा हूँ, फिर मुझको है किसका डर ?
पर वह त्रिशूल-रक्षण को ही था जन्मा,
जूझा रण में अनुपम पौरुष दिखलाकर ।।

(३)

जग देता रहा प्रमुखता इस जीवन को,
लेकिन शहीद सीखा है मर कर जीना।
अमरत्व मिले, जननी का सुख शाश्वत हो,
श्रेयस्कर माना कालकूट का पीना ।।

(४)

झर गया फूल-सा, सौरभ जग में फैला,
कर गया कोख तीर्थस्थल-सी अति पावन।
यह तन अनित्य, क्षण-भंगुर, इसमें क्या है ?
निर्भय तज इसे, किया अनुप्राणित कण-कण ।।

(५)

जब तक यमुना की लहरों के झूलों पर
रवि - चन्द्र अहर्निश मन से पेगें भरते,
जब तक निरभ्र नीलम-सम नीले नभ में
है रजनी का शृङ्गार सितारे करते,

(६)

जब तक सागर की बनी अगम गहराई,
नभ-चुम्बन करते शैल-शिखर अभिमानी,
जब तक धरती पर दिखती है हरियाली,
तब तक शहीद - गाथा गायेगी वाणी ।।

(७)

जब तक कलरव चेतनता का सुन पड़ता,
चट्टान तोड़ झरता है झर-झर निर्झर,
मानवता है मंजिल जब तक जीवन की,
तब तक शहीद रणधीर पुजेगा घर-घर ।।

(८)

हे भारत के अभिमान ! तुम्हारी जय हो ।
हे ध्रुवतारे द्युतिमान ! तुम्हारी जय हो ।।
हे माँ-बहनों के मान ! तुम्हारी जय हो ।
शत-शत कंठों के गान ! तुम्हारी जय हो ।।